इकाई 6 विभिन्न आचार्यों के अनुसार नाट्य की परिभाषा तथा भेद

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 विभिन्न आचार्यों के अनुसार नाट्य की परिभाषा तथा भेद

6.3 सारांश

6.4 शब्दावली

6.5 सन्दर्भ ग्रन्थ

6.6 बोध प्रश्न

6.0 उद्देश्य

नाट्य की परिभाषा तथा भेद से सम्बन्धित इस इकाई का अध्ययन कर लेने के बाद आप :

- भरतमुनि के अनुसार नाट्य का लक्षण जान सकेंगे।
- दशरूपक के नाट्य लक्षण का अध्ययन करेंगे।
- विश्वनाथ व अन्य आचार्यों के नाट्य लक्षणों को समझ सकेंगे।
- नाट्य के भेदों के स्वरूपों से परिचित हो सकेंगे।
- उपरूपकों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

संस्कृत वाङ्मय का आरम्भ वेदों से माना जाता है। वे विश्व के प्राचीनतम ग्रन्थ हैं। उनमें बाद की सभी ज्ञान–विज्ञान की धाराओं के बीज विद्यमान हैं। नाट्य के बीज भी वेदों में मिलते हैं। भरतमुनि नाट्य की रचना के प्रसंग में स्वयं इसे स्वीकार करते हैं कि उन्होंने ऋग्वेद से पाठ्य अर्थात् संवाद लिये हैं, यजुर्वेद से अभिनय, सामवेद से गीत और अथर्ववेद से रस। इस प्रकार उन्होंने नाट्य का स्रोत उन्होंने वेदों को माना है। स्वयं भरत मुनि ने नाट्य का सैद्धान्तिक विवेचन करने के लिए नाट्यशास्त्र की रचना की और उसमें विस्तार से नाट्य के सभी तत्त्वों का पर्याप्त विवेचन भी किया है। उन्होंने नाट्य का लक्षण और उसके भेदों के भी स्वरूपों को निरूपित किया है। भरतमुनि के पश्चात् नाट्यशास्त्रियों की विशाल परम्परा है। इस परंपरा में धनंजय, विश्वनाथ आदि आचार्य आते हैं। उन्होंने नाट्य की परिभाषा और उसके भेदों पर प्रकाश डाला है। नाट्य के दस भेदों में नाटक, प्रकरण, अंक, व्यायोग, भाण, समवकार, वीथी, प्रहसन, डिम और ईहामृग हैं। इनके अतिरिक्त नाटिका आदि उपरूपक भी हैं।

उपर्युक्त नाट्य के लक्षणों, नाट्य के भेदों और उपरूपक के भेदों को आपके अध्ययन के लिए इस इकाई में प्रस्तुत किया जा रहा है।

6.2 विभिन्न आचार्यों के अनुसार नाट्य की परिभाषा तथा भेद

काव्य की सभी विधाओं में से नाट्य प्राचीन काल से ही अत्यन्त लोकप्रिय विधा रही है। नाट्य का शास्त्रीय लक्षण करने वाला प्राचीनतम ग्रन्थ नाट्यशास्त्र है। इसमें नाट्य का विस्तार से विवेचन किया गया है। पूर्वकाल में समाज में कई बुराइयाँ आ गयी थीं। उन बुराइयों से छुटकारा पाने के लिए ऐसे ज्ञानयुक्त प्रकल्प की आवश्यकता थी जो समाज को सही दिशा दे सके। साथ ही सभी वर्णों के लिए भी उपयुक्त हो। तब भरत मुनि ने चारों वेदों से सामग्री लेकर नाट्यवेद की रचना की। यह नाट्यवेद चारों वेदों से गृहीत होने के कारण वेदों का अनुगामी था और सभी वर्णों के लिए भी ग्राह्य था।

भरतमुनि के पाश्चात् अनेक आचार्यों ने नाट्य लक्षण किये हैं। उन्होंने भरतमुनि का ही अनुसरण किया है किन्तु उनके निरूपण में कुछ नवीनता अवश्य आ गयी है। अब आपके अध्ययन के लिए प्रमुख आचार्यों के नाट्यलक्षणों को प्रस्तुत किया जा रहा है। सर्वप्रथम भरतमुनि के नाट्यलक्षण का अध्ययन कीजिए।

6.2.1 भरतमुनि के अनुसार नाट्य की परिभाषा– भरतमुनि नाट्य के शास्त्रीय विधान करने वाले आचार्यों में सबसे प्राचीन और सबसे प्रामाणिक माने जाते हैं। उन्होंने नाट्य के प्रायः सभी अंगों का विस्तार से विवेचन करने वाले ग्रन्थ नाट्यशास्त्र की रचना की है। नाट्य की परिभाषा अथवा लक्षण करते हुए वे कहते हैं कि लोक (संसार) का स्वभाव सुख और दुःख से समन्वित है। यह स्वभाव जब रंगमंच पर अभिनेताओं द्वारा अभिनीत होता है तो वह नाट्य की संज्ञा पाता है। इस हेतु अभिनेता चार प्रकार के अभिनय का आश्रय लेते हैं। अभिनय के वे चार प्रकार हैं– आंगिक, वाचिक, सात्त्विक और आहार्य। जैसा कि नाट्यशास्त्र के प्रथम अध्याय में द्रष्टव्य है–

योऽयं स्वभावो लोकस्य सुखदुःख समन्वितः।
सोऽङ्गाद्यभिनयोपेतो नाट्यमित्यभिधीयते।।

इस नाट्य में केवल दानवों या केवल देवों का ही वर्णन नहीं होता है अपितु इसमें तो तीनों लोकों के भावों का अभिनय द्वारा प्रस्तुतिकरण होता है। इस नाट्य में कहीं धर्म है तो कहीं क्रीड़ा, कहीं अर्थ, कहीं श्रम, कहीं हास्य, कहीं युद्ध, कहीं काम और कहीं वध का चित्रण दृष्टिगोचर होता है। धर्मपरायण जनों के लिए इसमें धर्म विद्यमान है, काम में प्रवृत्ति रखने वाले लोगों के लिए काम, उद्दण्ड लोगों के लिए दण्ड की, मदमत्त लोगों के दमन की व्यवस्था भी हैं। यह नपुंसकों अथवा कायरों में धृष्टता का, वीर जनों में उत्साह का संचार करने वाला है। यह अज्ञानियों को ज्ञान प्रदान करने वाला है साथ ही विद्वानों के ज्ञान को बढ़ाने वाला है। ऐश्वर्यसम्पन्न जनों के लिए विलास, दुःख से पीड़ित लोगों के लिए स्थिरता धन का उपार्जन करने वाले लोगों के लिए अर्थ तथा उद्विग्न मन वाले लोगों के लिए यह नाट्य धैर्य प्रदान करता है। यह नाट्य अनेक प्रकार के भावों से युक्त, विभिन्न अवस्थाओं वाला तथा लोक के व्यवहार का अनुकरण करने वाला है। स्वयं भरतमुनि के शब्दों में उपर्युक्त विषयवस्तु द्रष्टव्य है–

नैकान्ततोऽत्र भवतां देवानां चानुभावनम्।
त्रैलोक्यस्यास्य सर्वस्य नाट्यं भावानुकीर्तनम्।।

क्वचिद्धर्मः क्वचित्क्रीडा क्वचिदर्थः क्वचिच्छ्रमः।
क्वचिद्धास्यं क्वचिद्युद्धं क्वचित्कामः क्वचिद्वधः।।
धर्मो धर्मप्रवृत्तानां कामः कामोपसेविनाम्।
निग्रहो दुर्विनीतानां मत्तानां दमनक्रिया।।
क्लीबानां धार्ष्ट्यजननमुत्साहः शूरमानिनाम्।
अबुधानां विबोधष्च वैदुष्यं विदुषामपि।।
ईश्वराणां विलासश्च स्थैर्यं दुःखार्दितस्य च।
अर्थोपजीविनामर्थो धृतिरुद्विग्नचेतसाम्।।
नानाभावोपसम्पन्नं नानावस्थान्तरात्मकम्।
लोकवृत्तानुकरणं नाट्यमेतन्मया कृतम्।।

साथ ही वे कहते हैं कि ऐसा कोई ज्ञान नहीं है, ऐसी कोई विद्या नहीं है, ऐसी कोई कला नहीं है, ऐसा कोई योग नहीं है और ऐसा कोई कर्म नहीं है जो नाट्य में दिखाई न देता हो। नाट्यशास्त्र का निम्नलिखित वचन द्रष्टव्य है–

न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला।
नासौ योगो न तत्कर्म नाट्येऽस्मिन् यन्न दृष्यते।।

अर्थात् नाट्य में लोक में होने वाले सभी क्रिया कलापों को देखा जा सकता है। इससे नाट्य में वर्णित विषय–वस्तु की व्यापकता भी प्रकट होती है।

6.2.2 धनंजय के अनुसार नाट्य की परिभाषा

नाट्यशास्त्र के आचार्यों में दसवीं शताब्दी में जन्मे धनंजय का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। इनका ग्रन्थ दशरूपक नाट्य केशास्त्रीय विषयों का सरल रूप में प्रस्तुतिकरण करता है। इनके ग्रन्थ पर धनिक की अवलोक टीका भी अध्येताओं में अत्यन्त लोकप्रिय है। धनंजय ने दशरूपक के प्रथम प्रकाश में नाट्य का लक्षण करते हुए कहा है कि कथा के नायक आदि की अवस्थाओं का अभिनेताओं द्वारा आंगिक, वाचिक, सात्त्विक तथा आहार्य – इन चार प्रकार के अभिनयों द्वारा अनुकरण किया जाना ही नाट्य कहलाता है। धनंजय के शब्दों में–

'अवस्थानुकृतिर्नाट्यम्'।

साथ ही यह नाट्य रूप भी कहलाता है क्योंकि इसका रंगमंच पर अभिनय होता है इस कारण यह दृश्य भी होता है अर्थात् मंच पर देखा जाता है। धनंजय कहते हैं–

'रूपं दृष्यतयोच्यते।'

यह नाट्य एक अन्य नाम रूपक से भी जाना जाता है क्योंकि इसमें अभिनेता पर राम–सीता आदि अनुकार्य के स्वरूप को आरोपित कर दिया जाता है। इसी को निरूपित करते हुए धनंजय कहते हैं कि – 'रूपकं तत्समारोपात्'।

6.2.3 विश्वनाथ के अनुसार नाट्य की परिभाषा

विश्वनाथ के अनुसार काव्य के प्रथमतः दो भेद होते हैं– श्रव्य और दृश्य। इनमें से जो अभिनय के योग्य होता है वह दृश्य होता है। यही दृश्य नाट्य या रूपक कहलाता है। इसकी परिभाषा करते हुए विश्वनाथ लिखते हैं–

'दृष्यं तत्राभिनेयम्, तद् रूपारोपात्तु रूपकम्'

अर्थात् अभिनय करने वाले नट पर राम आदि के स्वरूप को आरोपित किया जाता है, इस कारण वह दृश्य काव्य रूपक कहलाता है। अभिनेता या नट चार प्रकार के अभिनय द्वारा राम–सीता आदि की अवस्था का अनुकरण करते हैं।

नाट्य की परिभाषा या लक्षण या स्वरूप को जानने के बाद अब हम नाट्य के भेदों या प्रकारों को जानेंगे।

6.3 नाट्य के भेद

आचार्य धनंजय का मानना है कि नाट्य के नाटक आदि दस भेद हो जाते हैं और इन भेदों का आधार बनते हैं– वस्तु, नेता और रस। इनमें कुछ भेद होने पर नाट्य के दस प्रकार हो जाते हैं। ये दस भेद हैं– नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार, डिम, ईहामृग, अंक, वीथी और प्रहसन। द्रष्टव्य है–

'नाटकमथ प्रकरणं भाणव्यायोगसमवकारडिमाः।
ईहामृगाङ्कवीथ्यः प्रहसनमिति रूपकाणि दश।।

इन भेदों को अब पढ़ते हैं। सर्वप्रथम सबसे प्रमुख और प्रसिद्ध भेद नाटक के बारे में जानते हैं।

6.3.1 नाटक

नाटक की कथावस्तु प्रसिद्ध होती है। यह नाटक मुख आदि पाँच संधियों, अनेक विभूतियों से युक्त होता है। यह सुख–दुःख की उत्पत्ति वाला होता है और इसमें निरंतर रसों की प्रतीति होती रहती है। इसमें अंकों की संख्या पाँच से लेकर दस तक हो सकती है।इसका नायक प्रख्याता वंश में उत्पन्न हुआ कोई राजर्षि जैसे दुष्यन्त आदि होता है जो धीरोदात्त कोटि का नायक होता है और प्रतापी होता है। इसमें नायक दिव्य या दिव्य–अदिव्य जैसे– राम आदि, होता है। नायक का गुणवान् होना भी आवश्यक माना गया है। नाटक में मुख्य रस एक ही हो सकता है, वह शृंगार हो या फिर वीर हो सकता है। शेष सभी रस अंग रूप में अर्थात् अमुख्य रूपा में रह सकते हैं। यह ध्यान देने योग्य है कि अंत में निर्वहण संधि में अद्भुत रस होना चाहिए। नाटक में चार या पाँच पात्र ही मुख्य रूप से कार्य में संलग्न रहते हैं। गाय की पूँछ के अग्र भाग के समान कथा का अंकों में निबन्धन करना चाहिए। नाटक का उदाहरण– महाकवि कालिदास का अभिज्ञानशाकुन्तलम्।

6.3.2 प्रकरण

प्रकरण में कथानक लौकिक और कवि की कल्पना पर आश्रित होता है। इसमें मुख्य रस शृंगार होता है। इसका नायक विप्र या मन्त्री या वणिक् होता है। यह नायक समस्याओं से घिरा हुआ रहता है साथ ही धर्म, अर्थ और काम में तत्पर होता है। यह नायक धीरप्रशान्त कोटि का नायक होता है। इसकी नायिका कहीं कुलजा अर्थात् अच्छे कुल में जन्म लेने वाली स्त्री, कहीं वेश्या और कहीं दोनों अर्थात् कुलीन और वेश्या नायिकाएँ होती हैं। प्रकरण का उदाहरण– महाकवि शूद्रक का मृच्छकटिकम्।

6.3.3 भाण

नाट्य के इस भेद में धूर्त का चरित वर्णित होता है। यह कई अवस्थाओं से समन्वित होता है। इसमें अंक की संख्या केवल एक ही होती है। एक निपुण पंडित विट रंगमंच पर अपने द्वारा अनुभूत या दूसरे के द्वारा अनुभूत विषय वृत्त को प्रकाशित करता है। अकेला ही वह आकाशभाषित उक्तियों के द्वारा संबोधन में उक्ति और प्रत्युक्तियाँ करता रहता है। वह शौर्य और सौभाग्य का वर्णन करके वीर और श्रृंगार रस की सूचना करता है। इसमें कथावस्तु कवि की कल्पना से जनित होती है। वृत्ति प्रायः भारती होती है किन्तु कहीं कैशिकी भी होती है। इसमें पंच संधियों में से मुख और निर्वहण संधि होती हैं तथा लास्य के गेयपद आदि दसों अंग होते हैं। भाण का उदाहरण– लीलामधुकर भाण।

6.3.4 व्यायोग

यह प्रसिद्ध कथानक वाला होता है। इसमें स्त्री पात्रों की संख्या बहुत कम होती है जबकि पुरुष पात्र अधिक होते हैं। नाट्य के इस भेद में गर्भ और विमर्श संधियाँ नहीं होती हैं। इसमें अंकों की संख्या केवल एक होती है। इसमें युद्ध का आरंभ स्त्री के कारण नहीं होता है। इसमें कैशिकी वृत्ति का अभाव रहता है। नायक प्रख्यात राजर्षि या दिव्य कोटि का या धीरोद्धत होता है। इसमें हास्य, श्रृंगार और शान्त को छोड़कर अन्य कोई रस मुख्य रूप में रहता है। व्यायोग का उदाहरण– सौगन्धिकाहरण।

6.3.5 समवकार

नाट्य के इस भेद में देवों और दैत्यों पर आश्रित प्रसिद्ध चरित वर्णित रहता है। इसमें विमर्श नामक संधि को छोड़कर शेष सभी संधियाँ रहती हैं। अंकों की संख्या तीन होती है। इनमें से प्रथम अंक में ही दो संधियाँ होती हैं। शेष दो अंकों अर्थात् दूसरे और तीसरे अंकों में केवल एक–एक संधि होती है। इसमें प्रख्यात देव, मानव आदि बारह नायक होते हैं जो धीरोदात्त कोटि के होते हैं। इनका फल भी पृथक्–पृथक् होता है। मुख्य रस वी होता है जबकि अन्य रस भी विद्यमान रहते हैं। कैशिकी वृत्ति स्वल्प ही होती है। इसमें बिन्दु और प्रवेशक नहीं होते हैं। समवकार का उदाहरण– समुद्रमथनम्।

6.3.6 डिम

माया, इन्द्रजाल (जादू), युद्ध और क्रोध से उद्भ्रान्त आदि की चेष्टाओं वाला, चन्द्र और सूर्य ग्रहणों से युक्त, प्रख्यात कथानक वाला नाट्य भेद डिम कहलाता है। इसमें मुख्य रस रौद्र होता है, शेष सभी रस अमुख्य रूपा में रहते हैं। इसमें अंकों की संख्या चार होती है। विष्कम्भक और प्रवेश नामक अर्थोपक्षेपकों का प्रयोग इसमें नहीं होता है। इसमें नायकों की संख्या 16 होती है जिनमें देव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, महोरग, भूत, प्रेत और पिशाच आदि अत्यन्त उद्धत नायक होते हैं। कैशिकी के अतिरिक्त अन्य वृत्तियाँ इसमें रहती हैं। विमर्श के अतिरिक्त अन्य चार संधियाँ इसमें होती हैं। इसमें शान्त, हास्य और श्रृंगार रस नहीं होते, इनके अतिरिक्त शेष छः रस होते हैं। डिम का उदाहरण– त्रिपुरदाह।

6.3.7 ईहामृग

इसकी कथावस्तु प्रख्यात और कवि कल्पना का मिश्रण होती है। अंकों की संख्या चार होती है। इसमें मुख, प्रतिमुख ओर निर्वहण संधियाँ होती हैं। नायक और प्रतिनायक

मनुष्य और देवता होते हैं किन्तु ये यथासंख्य नियम से रहित होते हैं। अर्थात् कहीं नायक मनुष्य और प्रतिनायक देवता, तो कहीं नायक देवता और प्रतिनायक मनुष्य हो जाते हैं। यहाँ नायक और प्रतिनायक धीरोद्धत रूप में होते हैं। प्रतिनायक गुप्त रूप से अनुचित कृत्यों में लिप्त रहता है। वे इच्छा न करती हुई दिव्य रमणी को अपहरण आदि के द्वारा पाने की इच्छा रखते हैं। प्रतिनायक को लेकर कुछ–कुछ श्रृंगाराभास का प्रदर्शन करना चाहिए। देवता और मनुष्य उद्धत नायक और प्रतिनायक सहित कुल दस पताकानायक होते हैं। नायक और प्रतिनायक के विरोध के पूर्णता तक जाने के बाद भी युद्ध टाल दिया जाता है। इस रूपक में महात्मा जन वध की स्थिति में पहुँच जाने पर भी मारने योग्य नहीं होते हैं। कुछ विद्वानों का मानना है कि इसमें एक ही अंक होता है और नायक देवता ही होता है। जबकि कुछ विद्वानों का मानना है कि इसमें दिव्य स्त्री के हेतु युद्ध होता है और छः नायक होते हैं। इस रूपक का ईहामृग नामकरण भी रोचक है। मृगमरीचिका में मृग द्वारा जल की चाह की भाँति इसमें नायक किसी अलभ्य रमणी को पाने की इच्छा करता है। ईहामृग का उदाहरण– कुसुमशेखरविजय।

6.3.8 अंक

इसे उत्सृष्टिकांक भी कहते हैं। इसमें एक ही अंक रहता है। इसके नायक साधारण मनुष्य होते हैं। इसमें स्थायी रस करुण होता है। यह बहुत सी स्त्रियों के विलाप से युक्त रहता है। इसमें प्रख्यात कथानक को कवि अपनी बुद्धि से हेर–फेर कर नया आकार देता है। इसमें भाण की तरह सन्धियाँ, वृत्तियाँ और लास्य के अंग होते हैं। इसमें नायक–प्रतिनायक की जय–पराजय और वाग् युद्ध की योजना की जाती है। अंक का उदाहरण– शर्मिष्ठाययाति।

6.3.9 वीथी

वीथी में अंकों की संख्या केवल एक होती है। उत्तम, मध्यम या अधम प्रकृति के किसी एक नायक की कल्पना इसमें होती है। वह आकाशभाषितों के द्वारा उक्ति–प्रत्युक्ति का आश्रय लेकर श्रृंगार को अधिक मात्रा में सूचित करता है, शेष रस भी रहते हैं। इसमें मुख ओर निर्वहण सन्धियाँ होती हैं, जबकि पाँचों अर्थप्रकृतियाँ विद्यमान रहती हैं। मनीषी जन इसके 13 अंगों का निर्देष करते हैं। वीथी का उदाहरण– मालविका।

6.3.10 प्रहसन

इस रूपक में भाण के समान संधि, संधि के अंग और लास्यांग होते हैं। इसमें अंकों की संख्या केवल एक होती है। इसमें कवि निन्दनीय जनों का चरित्र चित्रित करता है। इस प्रहसन में वृत्ति आरभटी होती है। विष्कम्भक और प्रवेशक नामक अर्थोपक्षेपक इसमें नहीं होते हैं। इसमें मुख्य रस हास्य होता है। वीथी के अंगों की स्थिति इसमें नहीं रहती है। इसका नायक तपस्वी, ब्रह्मवादी और ब्राह्मण– इनमें से कोई एक होता है। इसके तीन भेद होते हैं– शुद्ध, संकीर्ण और विकृत।

शुद्ध प्रहसन– जहाँ इसका नायक धृष्ट होता है उसे शुद्ध हास्य कहते हैं। जैसे– कन्दर्पकेलि।

संकीर्ण प्रहसन– जब धृष्ट से भिन्न किसी अन्य पुरुष को नायक बना कर प्रहसन रचा जाता है, उसे संकीर्ण कहते हैं। जैसे– धूर्तचरित।

विकृत प्रहसन– जिसमें नपुंसक, कंचुकी और तपस्वी– ये लोग आवारा, नट, योद्धा आदि के वेष और भाषा को लेकर अभिनय करें, वह विकृत प्रहसन कहलाता है।

6.4 उपरूपक

विशेष लक्षणों को छोड़कर उपरूपकों के सामान्य लक्षण नाटक के समान माने गये हैं। उपरूपक अठारह माने गये हैं। इनके नाम निम्नलिखित हैं– नाटिका, त्रोटक, गोष्ठी, सट्टक, नाट्यरासक, प्रस्थान, उल्लाप्य, काव्य, प्रेंखण, रासक, संलापक, श्रीगदित, शिल्पक, विलासिका, दुर्मल्लिका, प्रकरणी, हल्लीश और भाणिका। साहित्यदर्पण का उद्धरण द्रष्टव्य है–

'नाटिका त्रोटकं गोष्ठी सट्टकं नाट्यरासकम्।
प्रस्थानोल्लाप्यकाव्यानि प्रेङ्खणं रासकं तथा।।
संलापकं श्रीगदितं शिल्पकं च विलासिका।
दुर्मल्लिका प्रकरणी हल्लीशो भाणिकेति च।।
अष्टादश प्राहुरुपरूपकाणि मनीषिणः।
विना विषेशं सर्वेशां लक्ष्म नाटकवन्मतम्।।'

6.3 सारांश

'विभिन्न आचार्यों के अनुसार नाट्य की परिभाषा तथा भेद' नामक इस इकाई में आपने नाट्य की परिभाषा जानने हेतु अध्ययन किया। इस इकाई में भरतमुनि के द्वारा नाट्यशास्त्र में दिये गये नाट्य के विस्तृत लक्षण को, धनंजय द्वारा दशरूपक में दिये गये नाट्य लक्षण को और आचार्य विश्वनाथ द्वारा साहित्यदर्पण में दिये गये नाट्यलक्षण का आपने अध्ययन किया। राम आदि की अवस्थाओं का अनुकरण ही नाट्य है। यह अनुकरण नटों द्वारा चार प्रकार के अभिनयों के माध्यम से किया जाता है। यह चतुर्विध अभिनय है– आंगिक, वाचिक, सात्त्विक और आहार्य। यही नाट्य दृश्य होने के कारण रूप भी कहलाता है। इसके अतिरिक्त नट पर राम आदि के स्वरूप को आरोपित करने के कारण यह रूपक भी कहा जाता है। विषय–वस्तु की दृष्टि से नाट्य का क्षेत्र बहुत व्यापक होता है। यह नाट्य वस्तु, नेता (पात्र) और रस के आधार पर दस भेदों वाला हो जाता है। वे भेद हैं– नाटक, प्रकरण, भाण, व्यायोग, समवकार, डिम, ईहामृग, अंक, वीथी और प्रहसन। इनमें से प्रत्येक के लक्षण नाट्यशास्त्रीय ग्रन्थों में प्राप्त होते हैं। रूपकों के सामान्य गुणों से युक्त रहने वाले उपरूपक होते हैं। ये अठारह प्रकार के हैं। उपरूपकों के नाम हैं– नाटिका, त्रोटक, गोष्ठी, सट्टक, नाट्यरासक, प्रस्थान, उल्लाप्य, काव्य, प्रेंखण, रासक, संलापक, श्रीगदित, शिल्पक, विलासिका, दुर्मल्लिका, प्रकरणी, हल्लीश और भाणिका। इनके भी लक्षण साहित्यदर्पण में प्राप्त हो जाते हैं। इस प्रकार आपने नाट्य के लक्षण, नाट्य के भेदों के लक्षण के बारे में जाना। साथ ही उपरूपक के भेदों से आपका परिचय हुआ। इस इकाई का अध्ययन करने के पाश्चात् आप नाट्य को परिभाषित कर सकेंगे। रूपकों के दस प्रकारों का विवेचन एवं उपरूपकों के अठारह भेदों के नामों का वर्णन कर सकेंगे।

6.4 शब्दावली

1. श्रव्य काव्य– वह काव्य जिसे केवल सुना जा सके।
2. दृश्य काव्य– वह काव्य जिसे सुनने के साथ रंगमंच पर देखा जा सके।

3. नाट्य– चार प्रकार के अभिनय द्वारा प्राचीन राम आदि की अवस्थाओं का अनुकरण।
4. रूप– रंगमंच पर दृश्य (दर्शनीय) होने के कारण नाट्य का एक अन्य नाम रूप है।
5. रूपक– नट पर प्राचीन राम आदि का आरोप किया जाने के कारण नाट्य रूपक कहलाता है।
6. अनुकार्य– प्राचीन काल के वास्तविक राम आदि जिनका कि अनुकरण किया जाता है।
7. अनुकर्ता– नट या अभिनेता, जो राम आदि की अवस्थाओं को अभिनीत करता है।

6.5 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. नाट्यशास्त्र, भरतमुनि, बाबूलाल शुक्ल शास्त्री, चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, पुनर्मुद्रण 2017 ई.।
2. साहित्यदर्पण, विश्वनाथ, शेषराजशर्मा रेग्मी, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, त्रयोदश सं. 2010 ई.।
3. दशरूपक, धनंजय, डॉ. भोलाशंकर व्यास, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी, पुनर्मुद्रित सं. 2000 ई.।

6.6 बोध प्रश्न

1. नाट्य के रूप तथा रूपक नामकरण पर टिप्पणी लिखिए।
2. भरतमुनि के अनुसार नाट्य को परिभाषित कीजिए।
3. धनंजय के अनुसार नाट्य की परिभाषा लिखिए।
4. विश्वनाथ के अनुसार नाट्य की परिभाषा लिखिए।
5. नाटक को परिभाषित कर उदाहरण लिखिए।
6. प्रकरण को उदाहरण सहित समझाइए।
7. नाट्य के किन्हीं तीन भेदों को उदाहरण सहित समझाइए।
8. उपरूपकों के नाम लिखिए।
9. नाट्य की आवश्यकता पर प्रकाश डालिए।